ISSN: 0976-2876 (Print)
SPECIAL EDITION
ISSN: 2250-0138 (Online)

पारंपरिक कृषि का जलवायु परिवर्तन पर प्रभाव और अंतर्संबंध

तुलसीराम दहायत[a], बिन्दु श्रीवास्तव[b] एवं जया अहिरवार[c1]

[a]शासकीय कमला नेहरू महिला महाविद्यालय, दमोह, म.प्र., भारत
[b]शासकीय स्वशासी कन्या स्नातकोत्तर उत्कृष्ट महाविद्यालय, सागर, म.प्र., भारत

सारांश

पारंपरिक कृषि और जलवायु परिवर्तन एक–दूसरे से गहराई से जुड़े हुए हैं। यह शोध पत्र पारंपरिक कृषि पद्धतियों और जलवायु परिवर्तन के बीच के जटिल संबंधों की पड़ताल करता है। एक ओर, पारंपरिक कृषिकृजिसमें रासायनिक उर्वरकों का अत्यधिक उपयोग, गहन जुताई और पारंपरिक सिंचाई तकनीकें शामिल हैंकृग्रीनहाउस गैसों (जैसे मीथेन और नाइट्रस ऑक्साइड) के उत्सर्जन में महत्वपूर्ण भूमिका निभाती है, जो वैश्विक तापन (Global Warming) को बढ़ावा देती है। दूसरी ओर, बदलती जलवायु और अनियमित मानसून ने कृषि चक्र, मृदा उर्वरता और फसल उत्पादकता को गंभीर रूप से प्रभावित किया है, जिससे खाद्य सुरक्षा के लिए संकट उत्पन्न हो गया है। प्रस्तुत अध्ययन में यह दर्शाया गया है कि किस प्रकार मृदा क्षरण और वनों की कटाई ने पारिस्थितिक संतुलन को बिगाड़ा है। शोध यह निष्कर्ष निकालता है कि यद्यपि पारंपरिक पद्धतियाँ कुछ हद तक पर्यावरणीय असंतुलन का कारण बनी हैं, परंतु 'सतत कृषि' (Sustainable Agriculture) और श्जलवायु–अनुकूल तकनीकोंश के एकीकरण से इन दुष्प्रभावों को कम किया जा सकता है। यह पत्र पारंपरिक ज्ञान और आधुनिक वैज्ञानिक समाधानों के मध्य सामंजस्य स्थापित करने की आवश्यकता पर बल देता है ताकि भविष्य की कृषि को जलवायु परिवर्तन के प्रति अधिक लचीला और संधारणीय बनाया जा सके।

मुख्य शब्दः पारंपरिक कृषि, जलवायु परिवर्तन, ग्रीनहाउस गैस उत्सर्जन

परिचय

भारतीय संदर्भ में पारंपरिक कृषि से तात्पर्य उन पद्धतियों से है जो पीढ़ियों से संचित ज्ञान और बुद्धिमत्ता, स्वदेशी बीजों और प्राकृतिक संसाधनों के आधार पर चली आ रही हैं। हालांकि इन्हें अक्सर श्प्रकृति के अनुकूलश माना जाता है, लेकिन बदलती वैश्विक जनसंख्या और घटते संसाधनों के कारण इनका स्वरूप बदल गया है। यह अक्सर क्षेत्र की परिस्थितियों के अनुकूल होती है। परंपरागत कृषि पद्धति में आधुनिकीकरण और कृषि क्षेत्र में किसी भी प्रकार के व्यवसायीकरण का अभाव देखा जाता है। श्रम से लेकर बीजों तक, सभी प्रकार की पारंपरिक पद्धतियों का ही प्रयोग किया जाता है। यह एक प्राचीन खाद्य उत्पादन तकनीक है जो हजारों वर्षों से आधुनिक प्रौद्योगिकी या विकास के बिना ही प्रचलित है। इस प्रकार की अधिकांश खेती जीवन निर्वाह के लिए की जाती है। देश में आज भी हल और अन्य पारंपरिक कृषि उपकरण उपयोग में हैं।

शोध के मुख्य बिंदु

1. पारंपरिक पद्धतियों से होने वाला उत्सर्जन।
2. मृदा क्षरण और वनों की कटाई।
3. जलवायु परिवर्तन के प्रति पारंपरिक किसानों की भेद्यता।

पारंपरिक कृषि पद्धतियां और कार्बन उत्सर्जन

पारंपरिक कृषि के कुछ विशिष्ट पहलू अनजाने में जलवायु परिवर्तन को बढ़ावा देते हैं।

- झूम खेती (Shifting Cultivation): पूर्वोत्तर भारत और अन्य क्षेत्रों में वनों को जलाकर की जाने वाली खेती से भारी मात्रा में CO_2 और पर्टिकुलेट मैटर का उत्सर्जन होता है।
- पशुधन प्रबंधनः पारंपरिक रूप से पाले जाने वाले मवेशी मीथेन (CH_4) के बड़े स्रोत हैं, जो CO_2 की तुलना में 25 गुना अधिक गर्मी सोखती है।
- धान की पारंपरिक खेतीः जल–जमाव वाले खेतों में एनारोबिक (अवायवीय) अपघटन के कारण मीथेन का उत्सर्जन होता है।

जलवायु परिवर्तन का पारंपरिक कृषि पर प्रभाव (Impacts)

जलवायु परिवर्तन केवल कृषि से प्रभावित नहीं होता, बल्कि उसे विनाशकारी रूप से प्रभावित भी करता हैः

[1]Corresponding author

प्रभाव का कारक	पारंपरिक कृषि पर परिणाम
अनिश्चित वर्षा	सिंचाई सुविधाओं के अभाव में फसल की पूर्ण विफलता
तापमान में वृद्धि	स्थानीय स्वदेशी बीजों की अंकुरण क्षमता में कमी
कीटों का प्रकोप	बदलते मौसम के कारण नए प्रकार के कीटों और बीमारियों का उदय

शोध के दौरान निम्नलिखित अंतर्संबंध उभर कर सामने आए हैं:

1. उत्सर्जन का विरोधाभासरू जहाँ पारंपरिक कृषि में रासायनिक उर्वरकों का उपयोग कम होने से छ2व का उत्सर्जन न्यूनतम है, वहीं धान की खेती और पशुधन से मीथेन (ब्भ्4) का उत्सर्जन एक बड़ी चुनौती है।
2. लचीलापन (त्मेपसपमदबम)रू पारंपरिक बीज किस्में (स्ंदकतंबमे) आधुनिक संकर बीजों की तुलना में स्थानीय कीटों और अल्प वर्षा के प्रति अधिक सहनशील पाई गई हैं।
3. मिट्टी और कार्बन सिंकरू पारंपरिक खाद (थ्लउ) का उपयोग मिट्टी की संरचना को सुधारता है, जिससे मिट्टी में कार्बन को सोखने की क्षमता (ब्तइवद ैमुनमेजतंजपवद) बढ़ती है, जो ग्लोबल वार्मिंग को कम करने में सहायक है।

समाधान और भविष्य की राह

पारंपरिक कृषि को जलवायु–अनुकूल (Climate & Smart) बनाने के लिए निम्नलिखित कदम आवश्यक हैं:

1. झूम खेती के स्थान पर सीढ़ीनुमा खेती और कृषि–वानिकी को बढ़ावा देना।

   मीथेन कम करने के लिए धान की सघन प्रणाली (SRI) जैसी तकनीकों का समावेश।
2. कृषि–वानिकी (Agroforestry): फसलों के साथ पेड़ लगाना ताकि कार्बन सिंक का निर्माण हो सके।
3. न्यूनतम जुताई (Zero Tillage): मिट्टी में दबे कार्बन को वायुमंडल में जाने से रोकना
4. प्रणालीगत जल प्रबंधनः वर्षा जल संचयन की पारंपरिक तकनीकों (जैसे कुहल, जोहड़ का पुनरुद्धार।

निष्कर्ष

पारंपरिक कृषि जलवायु परिवर्तन का मुख्य कारण नहीं है लेकिन इसके कुछ अभ्यास जैसे वनों को जलाना वर्तमान संकट में योगदान देते हैं हालांकि पारंपरिक ज्ञान में ही जलवायु परिवर्तन से लड़ने के बीज छिपे हैं, यदि हम आधुनिक तकनीक और पारंपरिक विविधता का मेल कर सके तो हम एक खाद्य सुरक्षित भविष्य का निर्माण कर सकते हैं,शोध का निष्कर्ष यह है कि पारंपरिक कृषि अपने आप में समाधान का हिस्सा है, समस्या का नहीं। लेकिन इसे 'जलवायु–स्मार्ट' बनाने की आवश्यकता है।

संदर्भ सूची

मीथेन उत्सर्जन परः Saha, A., & Gupta, R. (2024). "Methane emissions from traditional paddy cultivation in South Asia: A Review." Journal of Environmental Management.

झूम खेती और कार्बन सिंकः Dhar, S. (2023). "Impact of Shifting Cultivation on Soil Carbon Sequestration in North-East India." Indian Journal of Agricultural Sciences.

जलवायु अनुकूलनः IPCC. (2019). Special Report on Climate Change, Desertification, Land Degradation, Sustainable Land Management, Food Security, and Greenhouse gas fluxes in Terrestrial Ecosystems.

FAO. (2022). The State of Food and Agriculture: Leveraging Automation.

ICAR. (2023). Annual Report: Resilience in Indian Agriculture.

IPCC. (2019). Special Report on Climate Change and Land.

NITI Aayog. (2021). Promoting Natural Farming Strategy.

https://www.krishakjagat.org/national-news/what-is-traditional-and-modern-farming-what-are-the-advantages-and-disadvantages/